पिंपरी चिंचवड़ न्यू टाउनशिप डेवलपमेंट अथॉरिटी

बनाम

विष्णुदेव को–ऑपरेटिव हाउसिंग सोसायटी एवं अन्य

03 अगस्त, 2018

[अभय मनोहर सप्रे और उदय उमेश ललित, न्यायमूर्तिगण]

भू–अर्जन अधिनियम, 1894 – धारा 48 अर्जित भूमि का मुक्त करना– राज्य सरकार के द्वारा लोकहित के लिए भूमि अर्जन– विशेष भू अर्जन अधिकारी (एस एल ए ओ) के द्वारा अंतर्गत धारा 11 के तहत की गयी कार्यवाही और अवार्ड पारित किया गया – मूल भूमि स्वामियों के द्वारा के विरूद्व लेख याचिका और विशेष अनुमति याचिका में पारित आदेश निरस्त किया गया – मूल भूस्वामियों के द्वारा अधिनियम की धारा 48 (1) के अंतर्गत राज्य के राजस्व मंत्री को अर्जन से भूमि मुक्त करने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया – आवेदन पत्र स्वीकार किया गया था और आंशिक रूप से भूमि को अर्जन कार्यवाही से मुक्त किया था – उसके पश्चात मूल भूमि स्वामियों के द्वारा प्रतिवादी क्र.1 को भूमि का अंतरण – प्रतिवादी क्रमांक 1 के द्वारा लेख याचिका पेश कर राजस्व मंत्री के द्वारा शेष भूमि को मुक्त करने के आशय से अस्वीकार करने से संबंधित आदेश को चुनौती दी गयी – प्रतिवादी क्रमांक 1 के द्वारा लेख याचिका और विशेष अनुमति याचिका प्रस्तुत की गयी, जो पुनः निरस्त की गयी– विशेष भू–अर्जन अधिकारी (एस एल ए ओ) द्वारा भूमि का कब्जा लिया गया । इसके पश्चात उत्तरवादी क्रमांक 1 के द्वारा राज्य के राजस्व मंत्री को नियम की धारा 48 (1) के अंतर्गत पुनः आवेदन प्रस्तुत कर शेष भूमि के भाग को अधिग्रहण से मुक्त किये जाने हेतु आवेदन किया गया – राजस्व मंत्री द्वारा आवेदन स्वीकार किया गया, प्रश्नगत भूमि को अधिग्रहण की कार्यवाही से विलोपित किया गया – औचित्य – अभिनिर्धारित – उचित नहीं – एक बार अधिग्रहित भूमि का कब्जा ले लिये जाने के बाद राज्य को अधिग्रहण से वापस लेने की कोई शक्ति नहीं है क्योंकि आधिपत्य प्राप्त कर लेने का परिणाम यह है कि अधिग्रहित भूमि पूर्णतः सभी प्रभारों से मुक्त होकर राज्य में निहित हो जाती है – प्रश्नाधीन मामले में एसएलएओ/विभूअ के द्वारा अधिग्रहित भूमि के शेष भाग का कब्जा लिया जा चुका था – जब प्रश्नगत भूमि का कब्जा राज्य के द्वारा लिया जा चुका था तो अधिनियम की धारा 48 का प्रावधान प्रयोज्य नहीं था – यह जोर दिया गया कि तत्कालीन राजस्व मंत्री को प्रश्नगत भूमि के संबंध में किसी भी प्रकार से सुनवाई कर निराकरण करने की अधिकारिता नहीं थी और जैसा भी हो प्रश्नगत भूमि को अधिग्रहण की कार्यवाही से मुक्त कराने के लिए अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों को लागू कराने की अधिकारिता नहीं थी ।

भू अधिग्रहण अधिनियम 1894 – धारा 48 – राज्य द्वारा सार्वजनिक उददेश्य के लिए भूमि अधिग्रहित की गयी – मुकदमेबाजी के कई दौर के पश्चात राज्य द्वारा आंशिक रूप से भूमि को अधिग्रहण से मुक्त कर

दिया – मूल भूमि स्वामी द्वारा उत्तरवादी क्रमांक 1 को भूमि अंतरित की गयी – उत्तरवादी क्रमांक 1 के द्वारा अधिनियम की धारा 48(1) के अंतर्गत राज्य के राजस्व मंत्री को अधिग्रहित भूमि के शेष भाग को मुक्त किये जाने हेतु आवेदन प्रस्तुत किया गया – राजस्व मंत्री द्वारा आवेदन स्वीकार कर प्रश्नगत भूमि को अधिग्रहण की कार्यवाही से विलोपित किया गया– क्या राजस्व मंत्री द्वारा पारित आदेश के द्वारा भूमिस्वामियों के पक्ष में कोई हित सृजित करता है, जो उन्हें राज्य के विरूद्व ऐसे आदेश के प्रर्वतन के लिए परमादेश का दावा करने के लिए सशक्त करती हो – निर्धारित – नहीं – सरकार के आधिकारिक फाईल में किसी भी व्यक्ति से संबंधित किसी प्रकरण के निराकरण के संदर्भ में किया गया मात्र एक लेख अनिवार्य रूप से सरकार का आंतरिक मामला है और इसका कोई विधिक महत्व नहीं है – जब तक कि सक्षम प्राधिकारी द्वारा विहित प्रक्रिया के अनुसार संबंधित व्यक्ति को यह साबित और संसूचित न कर दिया जाए, कि ऐसा निर्णय आंतरिक विवेचना पर आधारित था, ऐसा लेख संबंधित व्यक्ति के पक्ष में कोई अधिकार सृजित नहीं करता और न ही किसी विधिक आदेश की प्रकृति को प्राप्त करता है जो कि संबंधित व्यक्ति को ऐसे आंतरिक विवेचना का लाभ दावा करने के लिए योग्य बनाती हो – ऐसा लेख या/और विवेचना सदैव बदले जाने या संशोधन किये जाने या सक्षम प्राधिकारी द्वारा वापस लिये जाने के योग्य होती है।

न्यायालय द्वारा अपील को स्वीकार करते हुए –

अभिनिर्धारित – भू अधिग्रहण अधिनियम 1894 की धारा 48 राज्य को स्वतंत्रता प्रदान करती है कि वह धारा 36 के अंतर्गत आने वाले मामलों को छोडकर अधिग्रहण से किसी भूमि "जिसका कब्जा प्राप्त नहीं किया गया" वापस ले सकती है । दूसरे शब्दों में एक बार अधिग्रहित भूमि का कब्जा ले लिये जाने पर राज्य को ऐसे अधिग्रहण को वापस लेने का कोई अधिकारिता नहीं रहती है क्योंकि कब्जा प्राप्त करने के परिणामस्वरूप अर्जित भूमि सभी विलंगमों से पूर्ण रूप से मुक्त होकर राज्य में निहित हो जाती है । यह जोर दिया गया कि जब तक अधिग्रहित भूमि का कब्जा नहीं लिया जाता है तब तक राज्य प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर भागतः या पूर्णतः भूमि को अधिग्रहण से वापस लेने के लिए स्वतंत्र है ।

2– **राज्य द्वारा प्रश्नगत अधिग्रहित भूमि का कब्जा बलवंत नारायण भागडे के मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित परीक्षण के आधार पर कब्जा लिया गया, ऐसा निम्नलिखित कारणों से कहा जा सकता है :**

प्रथम – राज्य द्वारा प्रश्नगत भूमि के सभी सह भूमिस्वामियों को सूचना दिया जाकर उन्हें एसएलओ/विभूअअ द्वारा कब्जा लिये जाते समय उपस्थित रहने के लिए सूचित किया, दूसरा– सभी सह स्वामियों को कब्जा लेने के समय उपस्थित थे । यह पर्याप्त अनुपालन था, तीसरा– एसएलओ/विभूअअ द्वारा दो गवाहों की उपस्थिति में कब्जा लिया गया था, चौथा – कब्जा लेने के साक्ष्य स्वरूप पंचनामा पर गवाहों द्वारा विधिवत हस्ताक्षर किये गये थे, पांचवां – स्वामी के रूप में कब्जा प्राप्त करने के पश्चात राज्य सरकार का नाम राजस्व अभिलखों में

विधिवत दर्ज किया गया था, छटवां – राज्य ने अपीलार्थी (पीसीएनटीडीए) को बदले में कब्जा सौंप दिया था और सातवां पीसीएनटीडीए का नाम प्रश्नगत भूमि के राजस्व अभिलेखों में भी दर्ज किया गया था। [पैरा 43, 44] [324–सी, ई–जी]

3– एक बार यह निर्धारित होने पर कि अर्जित भूमि का कब्जा राज्य द्वारा लिया गया था तो भूमि राज्य में निहित हो जाती है, राज्य को अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों का अवलंब लेकर अधिग्रहण की कार्यवाही से भूमि को मुक्त करने की अधिकारिता से निर्योग्य बनाती है। यह जोर दिया गया कि तत्कालीन राजस्व मंत्री को प्रश्नगत भूमि के संबंध में किसी भी प्रकार से सुनवाई कर निराकरण करने की अधिकारिता नहीं थी और जैसा भी हो प्रश्नगत भूमि को अधिग्रहण की कार्यवाही से मुक्त कराने के लिए अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों को लागू कराने की अधिकारिता नहीं थी । [पैरा 45, 46] [324– जी–एच, 325–बी]

4.1 प्रश्न यह है कि क्या तत्कालीन राजस्व मंत्री द्वारा पारित आदेश दिनांक 10.06.2004 में प्रश्नगत अधिग्रहित भूमि को मुक्त करने का निर्देश अधिनियम की धारा 48 के अर्थ में एक आदेश के स्वरूप का है अथवा दूसरे शब्दों में क्या प्रश्नगत आदेश द्वारा भूस्वामियों के पक्ष में कोई अधिकार सृजित होता जो कि उन्हें ऐसे आदेश के प्रवर्तन के लिए राज्य के विरूद्व परमादेश का दावा करने के लिए सशक्त बनाती है । [पैरा 48] [325– सी – डी]

4.2 उपरोक्त प्रश्न का उत्तर "नहीं" है, इसका कारण यह है कि पहला – सरकार के आधिकारिक फाईल में किसी भी व्यक्ति से संबंधित किसी प्रकरण के निराकरण के संदर्भ में किया गया मात्र एक लेख अनिवार्य रूप से सरकार का आंतरिक मामला है और इसका कोई विधिक महत्व नहीं है, दूसरा – एक बार जब इस तरह के मुददे पर निर्णय लिया जाता है और उसे सरकार द्वारा सशक्त सक्षम प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित किया जाता है तो इसे राज्य सरकार द्वारा संबंधित व्यक्ति को सूचित किया जाना आवश्यक है । दूसरे शब्दों में, जबकि इस तरह के आंतरिक विवेचना पर आधारित निर्णय को निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार सक्षम प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित और संबंधित व्यक्ति को सूचित नहीं किया जाता, तब तक ऐसा नोटिंग संबंधित व्यक्ति के पक्ष में कोई अधिकार सृजित नहीं करती है और न ही यह किसी विधिक आदेश की प्रकृति का स्वरूप है, जिससे संबंधित व्यक्ति ऐसे किसी आंतरिक विचार विमर्श के किसी भी लाभ का दावा करने में सक्षम हो सके । ऐसी नोटिंग (या) या/और विवेचना हमेशा सक्षम प्राधिकारी द्वारा परिवर्तन या/संशोधित या/वापस लिये जाने में सक्षम होते हैं । तीसरा – अधिनियम की धारा 48 यह प्रावधानित नहीं करती है कि किसी भी अधिकरण कार्यवाही से भूमि को मुक्त करने के लिए राज्य द्वारा अधिसूचना जारी किया जाना आवश्यक है, लेकिन अधिनियम की योजना को ध्यान में रखते हुए जो किसी भी भूमि के अधिग्रहण के लिए अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करने की प्रक्रिया से शुरू होती है, ऐसे अधिग्रहण से भूमि की मुक्ति तभी पूरी होती है जब राज्य सरकार की ओर से अधिसूचना जारी की जाती है । [पैरा 49, 50 एवं 51] [325– डी–एच, 326–ए]

5– तत्कालीन राजस्व मंत्री, जिन्होंने दिनांक 10.06.2004 का आदेश पारित किया था, उनके पास प्रश्नगत भूमि की मुक्ति से संबंधित मामले को निपटारा करने का कोई अधिकार नहीं था । उसने अधिनियम की धारा 48 के अधिकारों को प्राप्त शक्ति का अतिक्रमण किया जो उनके पास कभी नहीं थी । निराकरण के दौरान उनके द्वारा राज्य की उदारता की नीति के अधिकार का दुरूपयोग था । [पैरा 54] [327– ई]

6.1 इसके अलावा भूस्वामियों द्वारा रिट याचिका दायर करना स्वयं न्यायिक प्रक्रिया का एक दुरूपयोग था जिसका सीधा सा कारण यह था कि पूर्व के मुकदमा भूस्वामियों के विरूद्व समाप्त हो गया था, जो पक्षकारों के लिए बंधनकारी था । उसने भूस्वामियों को पुनः वही मुददा दुबारा उठाने से निवारित कर दिया । [पैरा 55] [327– एफ]

6.2 वास्तव में अधिसूचना दिनांक 20.08.1994 के माध्यम से भूमि के कुछ हिस्से को भूमिस्वामियों के पक्ष में छोडना और शेष भूमि को परियोजना को पूर्ण करने के लिए अपने पास रखना एक सौदेबाजी की प्रकृति का था । उसने भूमि स्वामियों को शेष भूमि को आगे मुक्त करने के अधिकार से निर्योग्य कर दिया । यह इस तथ्य से अलग है कि राज्य द्वारा भूमि का कब्जा प्राप्त करने के परिणामस्वरूप अधिनियम की धारा 48 के तहत शेष भूमि को मुक्त करना अन्यथा विधिक रूप से संभव नहीं था । [पैरा 56] [327– जी–एच]

6.3 उच्च न्यायालय, मामले में उत्पन्न विवाद्यकों का सही मूल्यांकन करने में विफल रहा है इसलिए उच्च न्यायालय द्वारा दिये गये कारणों एवं निष्कषो से सहमति नहीं हो सकती जिसने राजस्व मंत्री द्वारा पारित आदेश दिनांक 10.06.2006 को गलत रूप से सही ठहराया । [पैरा 5] [327– जी–एच]

बलवंत नारायण भागडे विरूद्व एम डी भागवत एवं अन्य (1976) 1 एससीसी 700 : (1975) पूरक एससीआर 250 : शांति स्पोर्टस क्लब एवं अन्य बनाम युनियन आफ इंडिया एवं अन्य (2009) 15 एससीसी 705:, (2009) 13 एससीआर पर विश्वास किया ।

पंजाब राज्य बनाम सोडी सुखदेव सिंह, ए आई आर 1961 एस सी 493: [1961] एस सी आर 371:, बिहार राज्य बनाम कृपालु शंकर (1987) 3 एस सी सी 34:, [1987] 3 एस सी आर 1:, राजस्थान हाउसिंग बोर्ड बनाम श्री कृष्ण (1993) 2 एस सी सी 84, [1993] 1 एस सी आर 269:, सेठी आटो सर्विस स्टेशन बनाम डीडीए (2009) 1 एससीसी 180: और [2008] 14 एस सी आर 598: संदर्भित किया गया ।

संदर्भित न्याय दृष्टांत

[1975]	पूरक एस सी आर 250	भरोसा किया गया	पैरा 25
[1961]	एससीआर 371	संदर्भित	पैरा 52
[1987]	3 एससीआर 1	संदर्भित	पैरा 52
[1993]	1 एससीआर 269	संदर्भित	पैरा 52
[2008]	14 एससीआर 598	संदर्भित	पैरा 52
[2009]	13 एससीआर 710	संदर्भित	पैरा 52
[1961]	एससीआर 371	भरोसा किया गया	पैरा 52

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार सिविल अपील क्रमांक 7649/2018

उच्च न्यायालय बाम्बे क्षेत्राधिकार के रिट याचिका क्रमांक 5783/2006 के निर्णय और आदेश दिनांक 28.02.2017 से लिया गया ।

उपस्थित पक्षों के लिए श्री अरविंद दातार, सुश्री मीनाक्षी अरोरा वरिष्ठ अधिवक्ता, रविन्द्र केशव राव अदसुरे, प्रकाश अहिराव, अरविंद एस अवहड, अंकुर गुप्ता, अभिषेक कृष्णा, निशांत आर कटनेश्वरकर, सुश्री सुराना गनी, श्रीमती दीपा कुलकर्णी अधिवक्तागण ।

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति द्वारा सुनाया गया ।

अभय मनोहर सप्रे जे. 1– अनुमति प्रदान की गयी ।

2– यह अपील मुम्बई उच्च न्यायालय द्वारा 2006 की लेख याचिका संख्या क्र. 5783 में पारित अंतिम निर्णय और आदेश दिनांक 28.02.2017 के खिलाफ दायर की गयी है जिसके तहत उच्च न्यायालय ने इस याचिका के प्रतिवादी क्रमांक 1 द्वारा दायर याचिका को स्वीकार की थी और निर्देश दिया था कि राज्य सरकार भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1984 (इसके पश्चात इसे अधिनियम के रूप में संदर्भित किया जावेगा) की धारा 48 के तहत पारित राजस्व मंत्री के आदेश दिनांक 10.06.2004 के आधार पर अधिग्रहित भूमि को अधिग्रहण से मुक्त करने के लिए आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचना जारी करेगी ।

3– अपील में शामिल विवाद्यकों की विवेचना करने के लिए मामले की तथ्यात्मक पृष्टभूमि को विस्तार से बताना आवश्यक है । यहां नीचे उल्लेखित तथ्य विशेष अनुमति याचिका पेपर बुक और इसकी तारीखों की सूची से लिये गये है ।

4– मौजा वाकड, तहसील मुलशी, जिला पुणे (महाराष्ट्र) में स्थित सर्वेक्षण संख्या ग (गाट संख्या 210–क्षेत्रफल लगभग रकबा लगभग 39 एच 26 आर और सर्वेक्षण संख्या 211 रकबा क्षेत्रफल लगभग 1 एच 23 आर – कुल भूमि 40 एच 49 आर) मूल रूप से इसका स्वामित्व एक देव परिवार के सदस्यों के पास था ।

5– राज्य सरकार ने दिनांक 12.03.1970 को अधिनियम की धारा 4 के तहत एक अधिसूचना जारी कर इस भूमि का अधिग्रहण किया । इसके बाद अधिनियम की धारा 6 के तहत घोषणा का प्रकाशन किया गया । अधिग्रहण औद्योगिक, वाणिज्यिक और आवासीय उददेश्यों के लिए पिंपरी चिंचवड टाउनशिप क्षेत्र में भूमि का नियोजित विकास और उपयोग नामक योजना के सार्वजनिक उददेश्य के लिए था। जिस विकास परियोजना के लिए अधिग्रहण किया गया था, उसे पिंपरी चिंचवड टाउनशिप डेव्हलपमेंट अथारिटी (संक्षेप में जिसे पीसीएनटीडीए कहा जाता है) के माध्यम से निष्पादित किया जाना था ।

6– विशेष भूमि अधिग्रहण अधिकारी (संक्षेप में "विभूअअ" कहा जावेगा) भूमि स्वामियों को देय मुआवजे के निर्धारण के लिये अधिनियम की धारा 11 के तहत कार्यवाही प्रारंभ की और तदनुसार 23.09.1986 को एक अवार्ड पारित किया और इसके पश्चात विभूअअ के द्वारा अधिनियम की धारा 12(2) के अनुसार भूमि स्वामियों को सूचना पत्र जारी किया । चूंकि भूमिस्वामियों ने मुआवजा स्वीकार नहीं किया इसलिए मुआवजे की पूरी राशि विभूअअ के द्वारा कोषागार के राजस्व् जमा खाते में जमा कर दी गयी ।

7– देव परिवार (भूस्वामियों) के सदस्यों ने दिनांक 23.09.1986 के अवार्ड से व्यथित होकर मुम्बई उच्च न्यायालय में लेख याचिका डब्ल्यू पी क्रमांक 3719/1987 प्रस्तुत की । इस लेख याचिका को मुम्बई उच्च न्यायालय ने दिनांक 18.07.1989 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया। लेख याचिकाकर्तओं ने अपनी लेख याचिका खारिज होने से व्यथित होकर उच्च न्यायालय के समक्ष पुर्नविलोकन याचिका आर.पी.क्रमांक 3751/1989 दायर की जिसे दिनांक 08.09.1989 को वापस ले लिये जाने के कारण खारिज कर दिया गया । लेख याचिका और पुर्नविलोकन याचिका के खारिज होने से व्यथित होकर भूस्वामियों ने इस न्यायालय में विशेष अनुमति याचिका

(सी) क्रमांक 12889/1989 दायर की और इसे भी दिनांक 27.11.1989 को वापस लिये जाने के कारण खारिज कर दिया गया था ।

8– इस बीच, देव परिवार के सदस्यों ने दिनांक 19.09.1989 को अधिनियम की धारा 48(1) के तहत महाराष्ट्र राज्य के राजस्व मंत्री के समक्ष एक आवेदन पत्र दायर किया और अपनी अधिग्रहित भूमि को मुक्त करने की प्रार्थना की । इस आवेदन के लंबित रहने के दौरान, भूमिस्वामियों ने उच्च न्यायालय में लेख याचिका क्रमांक 36/1990 दायर की और उसमें अपने आवेदन पर निर्णय लेने के लिए राज्य को निर्देश देने की प्रार्थना की। उच्च न्यायालय ने दिनांक 12.01.1990 के आदेश द्वारा राज्य को भूमि स्वामियों के आवेदन पर विधि के अनुसार निराकृत करने का निर्देश दिया और लेख याचिका का निपटारा कर दिया ।

9– राज्य सरकार ने आदेश दिनांक 07.07.1992 के अनुसार भूमि स्वामियों के आवेदन को आंशिक रूप से स्वीकार की और रकबा 29 एच 98 आर की भूमि को मुक्त करते हुए शेष रकबा 10 एच 51 आर की भूमि को विकास परियोजना के निष्पादन के लिए बरकरार रखा जिसके लिए संपूर्ण भूमि अर्जित की गयी थी । यहां नीचे रखी गई भूमि और अर्जित की गयी भूमि का विवरण उल्लेखित है –

सर्वेक्षण क्रमांक	विभूअअ के अंतर्गत क्षेत्रफल एच:आर	अधिग्रहण से मुक्त किया गया क्षेत्रफल एच:आर	पीसीएनटीडीए को दिये जाने वाला अधिग्रहित क्षेत्रफल
210	39 एच 26 आर	28 एच 93 आर	10 एच 33 आर
211	1 एच 23 आर	1 एच 5 आर	0 एच 18 आर
कुल	40 एच 49 आर	29 एच 98 आर	10 एच 51 आर

10– कार्यवाहियों के अभिलेख से ऐसा प्रतीत होता है कि पुर्नविलोकन याचिका के खारिज होने के बाद भूमिस्वामियों ("देव परिवार" के सदस्यों) ने प्रश्नगत अर्जित भूमि को एक सहकारी आवास सोसायटी जिसे "विष्णुदेव" को–आपरेटिव हाउसिंग सोसायटी" (संक्षेप में वीसीएचएस कहा जावेगा) कहा जाता था, के सदस्यों को, जो इस इस याचिका में उत्तरवादी क्रमांक 1 हैं को दिनांक 25.10.1993 या उसके आसपास हस्तांतरित कर दिया।

11– प्रतिवादी क्रमांक 1 (वीसीएचएस) जो प्रश्नाधीन भूमि का स्वामी होने का दावा कर रहा है, राज्य के द्वारा रकबा 10 एच 51 आर की शेष भूमि मुक्त करने से इंकार करने के आदेश दिनांक 07.07.1992 से व्यथित होकर रिट याचिका क्रमांक 1116/1993 दायर कर आदेश की वैधता पर सवाल उठाया गया है, जिसमें उच्च न्यायालय ने दिनांक 23.03.1993 के आदेश द्वारा लेख याचिका का खारिज कर दिया और राज्य के आदेश को बरकरार रखा । प्रतिवादी क्रमांक 1 (वीसीएचएस) ने विशेष अनुमति याचिका (सि) क्रमांक 10056/1993 दायर करके मामले को इस न्यायालय के समक्ष पेश किया । इस न्यायालय ने विशेष अनुमति याचिका को खारिज कर दिया। इसके बाद संभागीय आयुक्त ने अधिनियम की धारा 48(1) के तहत दिनांक 20.08.1994 को एक अंतिम आदेश पारित कर सर्वेक्षण संख्या 210 में से 29 एच 98 आर को हटाने और विकास परियोजना को पूरा करने के लिए अधिग्रहित भूमि के रूप में 10 एच 33 आर को बनाये रखने का निर्देश दिया गया । इस प्रकार कुल अधिग्रहित भूमि में से 29 एच 98 आर भूमि को भूमिस्वामियों के पक्ष में अधिग्रहण की कार्यवाहियों से मुक्त कर दिया गया और अपीलकर्ता की एजेंसी के माध्यम से 10 एच 33 आर वाली भूमियों को बरकरार रखा ताकि राज्य उक्त भूमि पर विकास परियोजना को क्रियान्वित करने में सक्षम हो सके ।

12– इस न्यायालय तक मुकदमेंबाजी के दो दौर की समाप्ति के बावजूद भूमि मालिकों – वीसीएचएस ने पुनः तीसरा दौर प्रारंभ किया और उच्च न्यायालय में नई लेख याचिका क्रमांक 3200/1994 प्रस्तुत की और इस बार सर्वे क्रमांक 210/1 में से 10 एच 55 आर को हटाने के लिए प्रार्थना की । उच्च न्यायालय ने दिनांक 07.09.1994 के आदेश के द्वारा लेख याचिका खारिज कर दी । वीसीएचएस ने पुनः उक्त आदेश के विरूद्व इस न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति याचिका क्रमांक 22907/1994 दायर की जिसे दिनांक 10.02.1995 के आदेश के द्वारा खारिज कर दिया गया ।

13– विभूअअ (एसएओ) ने दिनांक 30.05.2000 को गेट क्रमांक 210 (10 एच 33 आर) वाली भूमि का कब्जा ले लिया और उसके समर्थन में पंचनामा निष्पादित किया गया । तदनुसार राज्य सरकार का नाम राजस्व अभिलेखों में दिनांक 21.07.2000 को नामान्तरण प्रविष्टि क्रमांक 8212 (फाईल क्रमांक 7/12) दर्ज किया गया था । राज्य सरकार ने दिनांक 08.11.2005 को पीसीएनटीडीए को संबंधित भूमि का कब्जा सौंप दिया ताकि वे भूमि पर कार्य प्रारंभ कर सके इसके बाद दिनांक 19.11.2005 को राजस्व अभिलेखों में पीसीएनटीडीए का नाम दर्ज किया गया ।

14– जैसा कि उपर उल्लेखित है पहले, दूसरे और तीसरे दौर की मुकदमेबाजी में हारने के बावजूद व्ही सी एच एस में फिर से अपने प्रयासों को नवीनीकृत कर महाराष्ट्र राज्य के राजस्व मंत्री को अधिनियम की धारा 48

(1) के तहत एक आवेदन पत्र दिनांक 20.01.2004 को मुकदमेबाजी का एक दौर प्रारंभ करने के लिए दायर किया गया । हालांकि राजस्व मंत्री ने दिनांक 10.06.2004 को फाईल में यह टीप अंकित की कि प्रश्नगत भूमि को अधिग्रहण की कार्यवाहियों से मुक्त कर दिया जावे ।

15– यहां यह उल्लेख करना उचित है कि जब दिनांक 10.06.2004 का आदेश पारित किया गया था, तब सितम्बर 2004 में महाराष्ट्र राज्य में विधानसभा चुनाव होने थे और जिसके संबंध में आचार संहिता लागू थी । यहां यह भी उल्लेख करना उचित है कि राजस्व मंत्री के द्वारा भूमि को मुक्त करने के संबंध में दिये गये आदेश को कभी भी भूमिस्वामियों को संसूचित नहीं किये गये थे। राज्य सरकार ने दिनांक 04.11.2004 को निर्देशित किया कि ऐसे सभी मामले जहां संबंधित पक्षों को आदेश संसूचित नहीं किये गये थे, उन्हें नये सिरे से उचित आदेश पारित किये जाने के लिए रखा जावे । वर्तमान मामला उनमे से है जहां आदेश को भूमिस्वामियों को संसूचित नहीं किया गया था, नये राजस्व मंत्री ने जिन्होंने पुराने मंत्री से कार्यभार ग्रहण किया था, द्वारा निर्देश दिया गया कि प्रश्नगत भूमि के संबंध में नये सिरे से विचार किया जावे। दिनांक 06.06.2006 को वी सी एच एस ने राज्य सरकार को एक पत्र लिखा कि पूर्व राजस्व मंत्री के द्वारा दिनांक 10.06.2004 को पारित किये गये आदेश को जारी करने एवं लागू करने के लिए जोर दिया, लेकिन फिर भी सरकार द्वारा वीसीएचएस के उक्त आग्रह को नहीं माना था इसलिए दिनांक 21.06.2006 को वीसीएचएस द्वारा उच्च न्यायालय में एक रिट याचिका (5783/2006) परमादेश जारी किये जाने की प्रार्थना के साथ दायर की गयी थी कि राज्य शासन द्वारा पूर्व राजस्व मंत्री के द्वारा दिनांक 1006.2004 को जारी आदेश को लागू कराने हेतु निर्देश दिया जावे और तत्संबंध में उचित अधिसूचना जारी कर 10 H 55 R की रिक्त भूमि को भी मुक्त कर दिया जावे।

16– इस रिट याचिका में वीसीएचएस ने एक पक्षकार के तौर पर राज्य को प्रत्युत्तरदाता के रूप में संयोजित किया है लेकिन पीसीएनटीडीए (यहां अपीलकर्ता) को संयोजित नहीं किया, तब पीसीएनटीडीए ने रिट याचिका में हस्तक्षेप के लिए एक आवेदन दायर किया जिसे स्वीकार करते हुए वीसीएचएस को निर्देश दिया गया कि पीसीएनटीडीए को प्रतिउत्तरदाता के रूप में रिट याचिका जोडा जावे ।

17– राज्य और पीसीएनटीडीए ने अन्य बातों के साथ इस आधार पर रिट याचिका को चुनौती दी कि पहला – रिट याचिका प्रचलनशील नहीं है, जहां तक कि संपूर्ण विवाद्यक जो प्रश्नगत भूमि के संबंध में है, राज्य के पक्ष में अंतिम रूप से विनिश्चित किया जा चुका है इसलिए अब आगे निर्णय के लिए कुछ शेष नहीं है । दूसरा– राज्य द्वारा काफी पहले दिनांक 30.05.2000 को प्रश्नगत भूमि का कब्जा लिया जा चुका है, इसीलिए अधिनियम की धारा

48 के प्रावधान मामले में लागू नहीं होते हैं और न ही धारा 48–ए का उपयोग भूमि को अधिग्रहण से मुक्त करने के लिए किया जा सकता था और अंत में तात्कालीन राजस्व मंत्री द्वारा दिनांक 10.06.2004 को पारित तथाकथित आदेश कोई विधिक आदेश होना तो दूर की बात थी, इससे भी अधिक यह है कि जब इसकी सूचना भूस्वामियों को नहीं दी गयी थी तो इससे उनके पक्ष में किसी भी प्रकार का अधिकार निर्मित नहीं होता था ।

18– उच्च न्यायालय ने आलोच्य आदेश द्वारा भूमि स्वामियों की रिट याचिका को स्वीकार कर लिया और एक परमादेश जारी कर राज्य को तात्कालीन राजस्व मंत्री द्वारा दिनांक 10.06.2004 को पारित आदेश को प्रभावी करने का निर्देश दिया । परमादेश जारी करने का प्रभाव 10 एच 33 आर की शेष भूमि को भूस्वामियों के पक्ष में अधिग्रहण की कार्यवाही से मुक्त करना है । इस आदेश के विरूद्व पीसीएनटीडीए ने विशेष अनुमति के माध्यम से इस न्यायालय के समक्ष यह अपील दायर की ।

19– इस अपील के विचारण के लिए प्रश्न उत्पन्न होता है कि क्या उच्च न्यायालय को भूमि मालिकों (यहां वीसीएचएस–प्रतिवादी क्र.1) द्वारा दायर रिट याचिका को स्वीकार करने को उचित ठहराया था और इसके परिणामस्वरूप प्रश्नाधीन भूमि के संबंध में राज्य को निर्देश जारी करना उचित था ।

20– अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अरविंद दातार, प्रत्युत्तरदाता क्रमांक 1 के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री मीनाक्षी अरोडा और प्रत्युत्तरदाता क्रमांक 2 व 3 के विद्वान अधिवक्ता श्री निशांत आर कटनेश्वरकर को सुना गया ।

21– अपीलकर्ता (पीसीएनटीडीए) की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री अरविंद दातार ने विवादित आदेश की वैधता और शुद्वता पर सवाल उठाते हुए मुख्य रूप से छह बिन्दुओं का आग्रह किया है ।

22– सबसे पहले विद्वान अधिवक्ता ने आग्रह किया कि उच्च न्यायालय ने भूस्वामियों की रिट याचिका को अनुमति देने में जो तर्क और निष्कर्ष निकाला है वह प्रथम दृष्टया कानूनी रूप से अस्थिर है और पूरी तरह से विकृत होने के कारण खारिज किये जाने योग्य है ।

23– दूसरे स्थान पर विद्वान अधिवक्ता ने आग्रह किया कि अधिनियम की धारा 48 (1) के संदर्भ में यह मुददा कि क्या विचाराधीन भूमि अधिग्रहण की कार्यवाही के चुंगल से मुक्त होने के योग्य है या नहीं, इस न्यायालय में भूस्वामियों के खिलाफ मुकदमेबाजी के पहले दौर में अधिनियम की धारा 48 के तहत प्रतिवादी क्रमांक 1 (भूस्वामियों) द्वारा एक और आवेदन दायर करके इसे फिर से उत्प्रेरित नहीं किया जा सकता था ।

24– विद्वान अधिवक्ता के अनुसार तत्कालीन राजस्व मंत्री को ऐसे आवेदन पर विचार करने का अधिकार कानूनी रूप से स्वीकार्य नहीं था ।

25– तीसरा – विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया कि जब राज्य ने बलवंत नारायण भागडे बनाम एम.डी.भागवत और अन्य (1976) 1 एस सी सी 700 में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के अनुसार बहुत पहले ही दिनांक 30.05.2000 को प्रश्नगत भूमि पर स्वीकृत रूप से कब्जा प्राप्त कर लिया था, अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों का हस्तगत मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होता था और न ही तत्कालीन राजस्व मंत्री और न ही राज्य के पास भूमि को या उसके किसी भाग को मुक्त करने के लिए दिनांक 30.05.2000 को या उसके बाद अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों को लागू करने का कोई अधिकार था।

26– चौथा– विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया कि तात्कालीन राजस्व मंत्री, जिन्होंने दिनांक 10.06.2004 को आदेश पारित किया था, के पास ऐसे किसी भी आवेदन पर विचार करने की कोई शक्ति नहीं थी क्योंकि सुसंगत समय के दौरान राज्य विधानसभा चुनावों की तारीख की घोषणा के कारण आचार संहिता लागू हो गयी थी जो किसी भी मंत्री को ऐसी शक्ति का प्रयोग करने की अनुमति नहीं देती ।

27– पांचवां– विद्वान अधिवकता ने तर्क दिया कि यहां तक कि दिनांक 10.06.2004 को फाईल में तात्कालीन राजस्व मंत्री द्वारा की गयी तथाकथित नोटिंग जिसमें अधिग्रहण की कार्यवाही से संबंधित भूमि को मुक्त करने का निर्देश दिया गया था, को कभी भी अधिनियम की धारा 48 के अर्थ के अंतर्गत है आदेश के रूप में नहीं माना जा सकता और न ही ऐसी नोटिंग में कानूनी आदेश की कोई विशेषता प्राप्त थी ।

28– उनका यह कहना था कि सर्वप्रथम ऐसी नोटिंग केवल तात्कालीन राजस्व मंत्री की नोटिंग बनकर रह गयी जिसे निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार भूस्वामियों को कभी सूचित नहीं किया गया और दूसरी बात इससे पहले कि यह नोटिंग इस धारा के अर्थ में एक आदेश का स्वरूप ले सके, राज्य सरकार द्वारा दिनांक 04.11.2004 के आदेश के द्वारा अधिनियम की धारा 48 को प्रभावी करने हेतु नोटिंग पर नये सिरे से विचार करने का आदेश दिया गया था ।

29– इस प्रकार विद्वान अधिवक्ता के अनुसार तथाकथित नोटिंग कभी प्रवृत्त में नहीं आया और भूमि स्वामियों के पक्ष में किसी प्रकार का कोई अधिकार या हित सृजित किये बिना ही फाईलों में ही उसका अंत हो गया ।

30– पांचवां– विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि तात्कालीन राजस्व मंत्री ने भूमि को अधिग्रहण की कार्यवाही के चंगुल से मुक्त करने का निर्देश देकर अन्य सर्वेक्षण संख्याओं के संबंध में समान आदेश पारित किये थे, लेकिन ऐसे सभी आदेश उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका में अपास्त कर दिये गये थे और उन आदेशों को इस न्यायालय द्वारा भी यथावत रखा गया था । विद्वान अधिवक्ता ने प्रकरणों की सूची प्रस्तुत की ।

31– छठवां – विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि दिनांक 20.08.1994 (अनुलग्नक पी 24) के आदेश द्वारा भूमि के हिस्से को मुक्त करते समय भूस्वामियों को यह स्पष्ट कर दिया गया था कि वे उक्त भूमि के लिए किसी भी मुआवजे का दावा करने के हकदार नहीं होंगे, इसलिए यह अनुरोध किया गया कि दिनांक 20.08.1994 को पढने से स्पष्ट रूप से संकेत मिलेगा कि भूमि के हिस्से को छोडना और शेष भूमि को अपने पास रखना राज्य और भूमिस्वामियों के बीच एक सौदेबाजी की प्रकृति थी और इसीलिए विचाराधीन शेष भूमि को आगे जारी करने का कोई अवसर नहीं आया जो निःसंदेह उस सार्वजनिक उददेश्य को पूरा करने के लिए आवश्यक था जिसके लिए उसे अधिग्रहित किया गया था ।

32– दूसरे शब्दों में निवेदन यह था कि दिनांक 20.08.1994 के आदेश् के तहत भूमि के कुछ हिस्से को जारी करने से भूस्वामी अधिग्रहण कार्यवाही से शेष भूमि को मुक्त करने का दावा करने के हकदार नहीं रह गये । यह इस तथ्य से भिन्न था कि धारा 16 के तहत कब्जा प्राप्त करने के कारण भूमि को अधिनियम की धारा 48 के तहत मुक्त करना संभव नहीं था ।

33– मूलतः यह आवश्यक प्रस्तुतियां विद्वान अधिवक्ता ने मामले के अभिलेख और इस न्यायालय के निर्णयों पर हवाला देकर अपने तर्कों में विस्तार से बताया है ।

34– जवाब में विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री मीनाक्षी अरोडा ने आक्षेपित आदेश का तर्क सहित समर्थन किया । उनका कहना था कि विवादित आदेश उचित तर्क पर आधारित है इसीलिए उसमें किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । विद्वान अधिवक्ता ने अपने कथन में उच्च न्यायालय के तर्क का समर्थन करने के लिए दस्तावेजों का हवाला देकर विस्तार से बताया ।

35– पक्षों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनने और मामले के अभिलेख को देखने पश्चात हम अपीलकर्ता के वरिष्ठ अधिवक्ता के दलीलों में बल पाते हैं ।

36– इस अपील में विचार के लिए उठने वाले मुख्य प्रश्न सबसे पहले यह है कि क्या तात्कालीन राजस्व मंत्री, जो कि राज्य के लिए और उसकी ओर से कार्य करने का दावा कर रहे, के पास इस मामले के पृष्टभूमि और तथ्यों में अधिग्रहण की कार्यवाही से विचाराधीन अर्जित भूमि को मुक्त करने के लिए अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों को लागू करने की शक्ति थी, दूसरा– क्या राज्य ने दिनांक 30.05.2000 को अधिग्रहित भूमि पर कब्जा कर लिया था और यदि हां, तो इसका प्रभाव और अंततः आदेश दिनांक 10.06.2004 की वास्तविक परिस्थिति क्या है ?

37– इस मामले के लिए धारा 16 और 48 सुसंगत है जो इस प्रकार पढ़ा जाएगा –

धारा 16

16 – कब्जा करने की शक्ति– जबकि कलेक्टर ने धारा 11 के अधीन अधिनिर्णय दे दिया हो तब वह भूमि पर कब्जा कर सकेगा, जो ऐसा होने पर सब विलंगमों से मुक्तकृत सरकार में आत्यांतिक्तः निहित हो जाएगी ।

धारा 48

48 – अर्जन पूरा करना अनिवार्य नहीं है किंतु यदि अर्जन न भी किया जाये तो भी प्रतिकर अधिनिर्णित किया जाएगा– (पहला – धारा 36 में जिस दशा के लिए उपबंध किया गया है, उस दशा के सिवाय, सरकार किसी ऐसी भूमि का, जिसका कब्जा नहीं लिया गया है, अर्जन करने से प्रत्याहृत हो जाने के लिए स्वतंत्र होगी), (दूसरा – जब कभी सरकार कोई ऐसा अर्जन करने से अपने को प्रत्याहृत कर ले तब कलेक्टर किसी सूचना के या तदधीन की गयी किन्हीं कार्यवाहियों के परिणामस्वरूप जो नुकसान स्वामी को पहुंचा है उसके लिए शोध्य प्रतिकर की रकम अवधारित करेगा ओर हितबद्व वयक्ति को ऐसी रकम उन सब खर्चो सहित देगा जो उस व्यकक्ति ने उक्त भूमि के संबंध में इस अधिनियम के अधीन कि कार्यवाहियों के अभियोजन में युक्ति युक्त रूप से उठाए हों ।), (तीसरा – इस अधिनियम के भाग तीन के उपबंध इस धारा के अधीन संदेय प्रतिकर का अवधारण करने को यावत्यशक्य लागू होंगे।)

38– अधिनियम की धारा 48 राज्य को धारा 36 में आने वाले मामलों को छोडकर किसी भी भूमि के अधिग्रहण से वापस करने की स्वतंत्रता देती है जिस पर कब्जा नहीं लिया गया है । दूसरे शब्दों में, एक बार अधिग्रहित भूमि का कब्जा ले लिया जाता है तो राज्य के पास अधिग्रहण से पीछे हटने की/वापस होने की कोई अधिकार नहीं है क्योंकि कब्जा लेने के परिणामस्वरूप अर्जित भूमि सभी बाधओं से मुक्त होकर राज्य के पक्ष में निहित हो जाती है ।

39– व्यक्त किया गया है कि, जब तक कि अधिग्रहित भूमि पर कब्जा न कर लिया जाए, राज्य प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर आंशिक या पूर्ण रूप से अधिग्रहण से वापस हटने के लिए स्वतंत्र है ।

40– अधिनियम की धारा 11 के तहत एवार्ड पारित होने पर जिलाधीश को अधिनियम की धारा 16 अर्जित भूमि पर कब्जा करने का अधिकार प्रदान करती है । एक बार जिलाधीश द्वारा कब्जा ले लिये जाने पर अर्जित भूमि सभी विलंगमों से मुक्त होकर राज्य में निहित हो जाती है जैसा कि उक्त में प्रावधानित है ।

41– बलवंत नारायण भागडे (उपरोक्त) वाले मामले में तीन न्यायाधीशों के न्यायपीठ के समक्ष यह प्रश्न उत्पन्न हुआ कि अधिनियम की धारा 16 के तहत अधिग्रहित भूमि का कब्जा कैसे व किस प्रकार लिया जाना आवश्यक है । बहुमत की राय व्यक्त करते हुए न्यायमूर्ति भगवती (तत्कालीन न्यायमूर्ति द्वारा) ने पैरा 28 में इस विवाद्यक को संक्षेप में निराकृत किया –

> **"28 ..... हमारे विचार से भूमि अधिग्रहण अधिनियम 1894 के तहत जब राज्य, अपने द्वारा अर्जित भूमि का कब्जा लेने के लिए अग्रसर होती है तो उस भूमि का वास्तविक कब्जा लेना ही राज्य के लिए पर्याप्त है यद्यपि उसके द्वारा भूमि में निहित समस्त हितों को अर्जित करना चाहिए । सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत पारित न्यायिक निर्णयों के परिप्रेक्ष्य में "प्रतिकात्मक" कब्जा लिये जाने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता है और न ही सिर्फ कागज में कब्जा लिया जाना पर्याप्त होता है । जैसा कि अधिनियम का मत है कि सरकार को भूमि सौंपने की एक आवश्यक शर्त के रूप में वर्णित है, वह है भूमि का वास्तविक कब्जा लेना । इस तरह का कब्जा कैसे लिया जा सकता है, यह भूमि की प्रकृति पर निर्भर करेगा । इस तरह के कब्जे को भूमि की प्रकृति के अनुसार लेना होगा । भूमि पर कब्जा लेने के लिए कौन सा अधिनियम पर्याप्त होगा, यह निर्धारित करने वाला कोई कठोर और त्वरित नियम नहीं हो सकता है इसीलिए प्रत्येक मामले में भूमि का अधिकार लेने के लिए हमें एक पूर्ण और अलंघनीय नियम निर्धारित करने के रूप में नहीं लिया जाना चाहिए कि केवल मौके पर जाना और ढोल की थाप से या अन्यथा एक घोषणा करना पर्याप्त होगा । लेकिन यहां हमारी राय में क्योंकि प्रश्नगत जमीन तात्विक समय में पड़त पड़ी थी और उस पर कोई फसल नहीं थी । तहसीलदार का निर्धारण के उददेश्य से मौके पर जाना और कौन सा भाग बंजर है और कौन सा कृषि योग्य है निरीक्षण किया जाना चाहिए । इसलिए कब्जा लेने के लिए और निर्धारण के उददेश्य से जमीन का कब्जा लिया जाना पर्याप्त है । ऐसा प्रतीत होता है कि अपीलार्थी, तहसीलदार के**

द्वारा जब उक्त कार्य किया जा रहा था वहां मौजूद नहीं था लेकिन जमीन का प्रभावी कब्जा लेने के लिए भूमि के स्वामी या आधिपत्यधारी वहां मौजूद होना आवश्यक नहीं है । किसी विशेष समय भूमि का कब्जा लिये जाने के लिए भूमि के स्वामी या कब्जेदार को नोटिस जारी किया जाना भी कानूनी रूप से आवश्यक नहीं है । यद्यपि जहां यह संभव हो ऐसी अपेक्षा की जा सकती है कि ऐसी नोटिस कब्जा लिये जाने के पूर्व प्राधिकारियों के द्वारा दी जाए ताकि मात्र कागज पर कब्जा लिये जाते समय स्वामी अथवा कब्जेदार के ज्ञान में आये बिना ऐसे किसी धोखेपूर्ण या कपटपूर्ण अंतरण की संभावना को हटाया जा सके।

42– बलवंत नारायण भागडे (उपरोक्त) वाले मामले में निर्धारित प्रतिपादित विधि को ध्यान में रखते हुए, हम इस प्रश्न की जांच करने के लिए आगे बढ़ते हैं कि क्या शेष अधिग्रहित भूमि का कब्जा राज्य द्वारा लिया गया था और यदि हां तो, क्या यह इस न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार किया गया था ।

43– राज्य द्वारा पंचनामा (अनुलग्नक पी 4) दिनांक 30.05.2004 नामान्तरण प्रविष्टि संखया 8212 (नस्ती 7/12) (अनुलग्नक पी 5), कब्जा पावती (अनुलग्नक पी 12) और पीसीएनटीडीए का नामान्तरण प्रविष्टि (अनुलग्नक–पी 28/29), जिन पर राज्य के द्वारा विश्वास किया गया था का अवलोकन करने के बाद, हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि राज्य में बलवंत नारायण वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार दिनांक 30.05.2020 को अधिग्रहित भूमि पर कब्जा प्राप्त कर लिया था । ऐसा हम निम्नलिखित कारणों से कहते हैं ।

44– प्रथम – राज्य ने प्रश्नगत भूमि के सभी सह भूमिस्वामियों को नोटिस दिया और उन्हें एसएलओ/विभूअ द्वारा कब्जा लेने के समय उपस्थित रहने के लिए सूचित किया, दूसरा – सभी सह मालिकों में से दो अर्थात चंद्रकांत गजानन देव और भालचंद्र चिंतामनदेव कब्जा लेने के समय उपस्थित थे । यह पर्याप्त अनुपालन था, तीसरा– एसएलओ/विभूअ द्वारा दो गवाहों की उपस्थिति में कब्जा लिया गया था, चौथा – कब्जा लेने के साक्ष्य के लिए पंचनामा पर गवाहों द्वारा विधिवत हस्ताक्षर किये गये थे, पांचवां – स्वामी के रूप में कब्जा प्राप्त करने के पश्चात राज्य सरकार का नाम राजस्व अभिलखों में विधिवत दर्ज किया गया था, छटवां – राज्य ने अपीलार्थी (पीसीएनटीडीए) को बदले में कब्जा सौंप दिया था और सातवां पीसीएनटीडीए का नाम प्रश्नगत भूमि के राजस्व अभिलेखों में भी दर्ज किया गया था ।

45– जब हमने एक बार यह निर्धारित कर दिया है कि राज्य द्वारा विचाराधीन भूमि का कब्जा दिनांक 30.05.2004 को भूमिस्वामियों से विधि के अनुसार ले लिया गया था, तो हमें यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि अधिनियम की धारा 48 के प्रावधान हस्तगत मामले में लागू नहीं होते थे। दूसरे शब्दों में एक बार जब यह निर्धारित कर दिया गया कि अर्जित भूमि का कब्जा राज्य के पास था, तब भूमि राज्य के पक्ष में निहित हो गयी थी जिसे राज्य को अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों का अवलंब लेकर अधिग्रहण की कार्यवाही से भूमि को मुक्त करने का अधिकार नहीं था।

46– बल देकर यह व्यक्त किया गया कि, तत्कालीन राजस्व मंत्री के पास प्रश्नगत भूमि के संबंध में किसी भी प्रकार से कार्यवाही करने की कोई अधिकारिता नहीं थी और न ही प्रश्नगत भूमि को अधिग्रहण की कार्यवाही से मुक्त कराने के लिए अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों को लागू करने का कोई अधिकार था ।

47– यह हमें एक अन्य प्रश्न की जांच करने के लिए अग्रसर करता है, हालांकि कब्जे के मुददे पर हमारे निष्कर्ष के आलोक में हमारे लिए इस प्रश्न की विस्तार से जांच करना आवश्यक नहीं है ।

48– प्रश्न यह है कि क्या तत्कालीन राजस्व मंत्री द्वारा पारित आदेश दिनांक 10.06.2004 में प्रश्नगत अधिग्रहित भूमि को मुक्त करने का निर्देश अधिनियम की धारा 48 के अर्थ में एक आदेश के गुण है या दूसरे शब्दों में क्या प्रश्नगत आदेश में भूस्वामियों के पक्ष में कोई अधिकार सृजित किया गया ताकि वे राज्य के विरूद्व ऐसे आदेश को लागू करने के लिए परमादेश का दावा करने में सक्षम हो सके ।

49– प्रश्न के संबंध में हमारा उत्तर "नहीं" है, क्योंकि पहला – किसी भी व्यक्ति से संबंधित किसी भी मामले से निपटारे के दौरान सरकार की अधिकारिक फाईलों में एक नोटिंग अनिवार्य रूप से सरकार का आंतरिक मामला है और उसमें कोई कानूनी पात्रता नहीं है, दूसरा – एक बार जब इस तरह के मुददे पर निर्णय लिया जाता है और उसे सरकार द्वारा सशक्त सक्षम प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित किया जाता है तो इसे राज्य सरकार द्वारा संबंधित व्यक्ति को सूचित किया जाना आवश्यक है ।

50– दूसरे शब्दों में, जबकि इस तरह के आंतरिक विचार विमर्श पर आधारित निर्णय को निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार सक्षम प्राधिकारी द्वारा अनुमोदित और संबंधित व्यक्ति को सूचित नहीं किया जाता, तब तक ऐसी नोटिंग संबंधित व्यक्ति के पक्ष में कोई अधिकार सृजित नहीं करती है और न ही यह किसी विधिक आदेश की प्रकृति का भाग है, जिससे संबंधित व्यक्ति ऐसे किसी आंतरिक विचार विमर्श के किसी भी लाभ का दावा करने में सक्षम हो

सके । ऐसी नोटिंग (या) या/और विवेचना हमेशा सक्षम प्राधिकारी द्वारा बदले या/संशोधित या/वापस लिये जाने में सक्षम होते हैं ।

51– तीसरा – अधिनियम की धारा 48 के अनुसार यह प्रावधान नहीं करती है कि किसी भी अधिग्रहण की कार्यवाही से भूमि को मुक्त करना राज्य द्वारा अधिसूचना जारी करके की जानी आवश्यक है, लेकिन हमारे विचार में अधिनियम की योजना को ध्यान में रखते हुए जो किसी भी भूमि के अधिग्रहण के लिए अधिनियम की धारा 4 के तहत अधिसूचना जारी करने की प्रक्रिया से शुरू होती है, ऐसे अधिग्रहण से भूमि की मुक्ति तभी पूरी होती है जब राज्य सरकार की ओर से अधिसूचना जारी की जाती है ।

52– वास्तव में उपरोक्त मुददे में "रेस इन्टेग्रा" अब शेष नहीं है और इस न्यायालय द्वारा कई निर्णयों में निर्णित किया गया है, जैसे पंजाब राज्य बनाम सोडी सुखदेव सिंह, ए आई आर 1961 एस सी 493, बिहार राज्य बनाम कृपालु शंकर (1987) 3 एस सी सी 34, राजस्थान हाउसिंग बोर्ड बनाम श्री कृष्ण (1993) 2 एस सी सी 84, सेठी आटो सर्विस स्टेशन बनाम डीडीए (2009) 1 एससीसी 180 और शांति स्पोर्टस क्लब एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य (2009) 15 एससीसी 705.

53– शांति स्पोर्टस (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के दो न्यायाधीशों की पीठ में न्यायमूर्ति सिंघवी की ओर से वर्णित उपर उल्लेखित पिछले सभी मामले के निर्णय सार पर ध्यान दिया और निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया –

> **"37.....हालांकि, धारा 48(1) की स्पष्ट भाषा से ऐसा कोई संकेत नहीं दिया गया है कि राज्य को किस तरीके या किस रूप से किसी भूमि के अधिग्रहण से वापस हटने की शक्ति/विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाना है, 1894 के अधिनियम के भाग II और VII की योजना को ध्यान में रखते हुए धारा 4(1) के तहत अधिसूचना, धारा 6 के तहत घोषणा और धारा 42 के अंतर्गत समझौते का आधिकारिक राजपत्र में किसी भी सार्वजनिक उददेश्य या किसी कंपनी के लिए भूमि के वैध अधिग्रहण के लिए प्रकाशन का प्रावधान एक आवश्यक शर्त के रूप में निर्धारित किया गया है । यह विचार करना उचित है कि अधिग्रहण से पीछे हटने के उस सार्वजनिक उददेश्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड सकता है, जिसके लिए या जिस कंपनी की ओर से अधिग्रहण प्रस्तावित है, केवल राजपत्र में अधिसूचना जारी करके ही किया जा सकता है।**

39. भूमि के अधिग्रहण से हटने के लिए अधिनियम की धारा 48(1) के तहत अधिकार का प्रयोग करने के लिए एक अधिसूचना जारी करने की आवश्यकता का अनुमान इस न्यायालय के निम्न निर्णयों से भी लगाया गया है– म्युनिशिपल कमेटी भटिण्डा बनाम भूमि अधिग्रहण कलेक्टर एवं अन्य (1993) 3 एस सी सी 24, यू.पी. राज्य शुगर कार्पोरेशन लि. विरूद्ध यू.पी.राज्य एवं अन्य (1995) पूरक 3 एस सी सी 538,महाराष्ट्र राज्य एवं अन्य विरूद्ध उमाशंकर राजभानु एवं अन्य (1996) 1 एस सी सी 299 और तमिलनाडु राज्य एवं अन्य बनाम एल कृष्णन एवं अन्य (1996) 7 एस सी सी 450

43. फाईल में दर्ज की गयी नोटिंग मात्र एक साधारण नोटिंग है और उससे अधिक कुछ नहीं। यह केवल व्यक्ति विशेष द्वारा अभिव्यक्ति की राय का प्रतिनिधित्व करती है । इस तरह की नोटिंग को बिना किसी कल्पना के सरकार का निर्णय नहीं माना जा सकता है, भले ही सक्षम प्राधिकारी द्वारा मामले के गुण दोषों पर अपनी राय फाईल में दर्ज किया गया है और इसे सरकार का निर्णय नहीं कहा जा सकता, जब तक कि इसे अनुच्छेद 77 (1) और (2) या अनुच्छेद 166 (1) और (2) के अनुसार आदेश जारी करने पर कार्यवाही नहीं की जाती है । फाईल में की गयी कोई नोटिंग या यहां तक की लिया गया कोई निर्णय, जिससे कि पक्षकारों का हित प्रभावित होता हो, आदेश के रूप में परिणित हुआ माना जाएगा जबकि वह राष्ट्रपति या राज्यपाल के नाम पर जैसी भी परस्थिति हो, अभिव्यक्त रूप से उल्लेखित न हो और अनुच्छेद 77(2) अथवा अनुच्छेद 166 (2) के प्रावधानों के अनुसार प्रमाणीकृत न किया गया हो । कोई भी नोटिंग यहां तक कि फाईल में किये गये निर्णय की हमेशा समीक्षा की जा सकती है, उलट की जा सकती है/निर्णय को पलटा जा सकता है या निरस्त किया जा सकता है और न्यायालय न्यायिक समीक्षा के अधिकार के लिए पहले की गयी नोटिंग या निर्णय पर संज्ञान नहीं ले सकती है।

54– उपरोक्त चर्चा के आलोक में हमारी सुविचारित राय है कि तत्कालीन राजस्व मंत्री ने दिनांक 10.04.2004 को आदेश पारित किया था, उनके पास प्रश्नगत भूमि की मुक्ति से संबंधित मामले को निपटारा करने का कोई अधिकार नहीं था । उन्होंने अधिनियम की धारा 48 के अधिकारों को प्राप्त शक्ति अतिक्रमण किया जो उनके पास कभी नहीं थी । यह राज्य की उदारता से निपटने की नीति के दौरान उनके द्वारा अधिकार का दुरूपयोग था ।

55– इसके अलावा, हमारे विचार में भूस्वामियों द्वारा रिट याचिका दायर करना एवं स्वयं एक न्यायिक प्रक्रिया का दुरूपयोग था जिसका सीधा सा कारण यह था कि पूर्व के मुकदमा जो तीन बार इस न्यायालय के समक्ष

आया था, भूस्वामियों के विरूद्व समाप्त हो गया था, जो पक्षकारों के लिए बंधनकारी था । उसने भूस्वामियों को पुनः वही मुददा दुबारा उठाने से रोक दिया ।

56– वास्तव में अधिसूचना दिनांक 20.08.1994 के माध्यम से भूमि के कुछ हिस्से को भूमिस्वामियों के पक्ष में छोडना और शेष भूमि को परियोजना को पूर्ण करने के लिए अपने पास रखना एक सौदेबाजी की प्रकृति का था । उसने भूमि स्वामियों को शेष भूमि को आगे मुक्त करने का अधिकार नहीं दिया । यह इस तथ्य से अलग है कि राज्य द्वारा भूमि का कब्जा प्राप्त करने के परिणामस्वरूप अधिनियम की धारा 48 के तहत शेष भूमि को मुक्त करना अन्यथा विधिक रूप से संभव नहीं था ।

57– उपरोक्त बहस के आलोक में हमारा मत है कि उच्च न्यायालय मामले में उत्पन्न मुददों की सही जांच करने में विफल रहा इसलिए हम उच्च न्यायालय के तर्क और निष्कर्ष से सहमत नहीं है, जिसमें संबंधित राजस्व मंत्री द्वारा पारित आदेश दिनांक 10.06.2006 के आदेश को गलत रूप से सही ठहराया ।

58– इस प्रकार अपील सफल होती है और तदनुसार स्वीकार की जाती है । आक्षेपित आदेश निरस्त किया जाता है । परिणामस्वरूप प्रतिवादी क्रमांक 1 द्वारा दायर की गयी याचिका, प्रतिवादी क्रमांक 1 द्वारा अपीलार्थी को देय 25,000/– रूपये के परिव्यय के साथ खारिज की जाती है ।

अंकित ज्ञान अपील निरस्त ।

¼ अजय सिंह राजपूत ½